भूमिका

अब्दुल बिस्मिल्लाह हिंदी साहित्य जगत के प्रमुख कथाकार हैं जो तीन दशकों से साहित्य सृजन में सक्रिय हैं। अब्दुल बिस्मिल्लाह का लेखन कृत्रिमता के बरक्स स्वाभाविकता, सांप्रदायिकता के बरक्स मनुष्यता और शोषण के विरुद्ध सतत संघर्ष है। इनका संपूर्ण लेखन हिंदुस्तानी सभ्यता-संस्कृति और उसकी साझी विरासत का प्रबल पक्षधर है। अब्दुल बिस्मिल्लाह हमेशा उन शक्तियों और प्रवृत्तियों का विरोध करते रहे हैं जो भारतीय एकता को धर्म, संप्रदाय, भाषा, जाति व क्षेत्र के आधार पर अपने हितों के लिए बांट रहे हैं। इनके अधिकांश उपन्यासों में मुस्लिम समाज के संघर्ष, संवेदनाएं, यातनाएं और अंतर्द्वंद्व उनकी रचनाओं के मुख्य केंद्र रहे हैं। अब्दुल बिस्मिल्लाह स्वयं को हिंदू या मुस्लिम लेखक नहीं बल्कि जनवादी या मानवतावादी लेखक मानते हैं। अब्दुल बिस्मिल्लाह से बातचीत के दौरान प्रसंगवश मैंने पूछा 'क्या शराब को इस्लाम में हराम माना गया है?' इस बात पर उन्होंने कहा 'सामने दो मुसलमान बैठे हैं उनसे पूछिए, मुझसे क्यों पूछ रहे हैं|' हालांकि बाद में उन्होंने इसके बारे में बताया भी। लेकिन उनकी इस प्रतिक्रिया से यह स्पष्ट होता है कि जो ईमानदारी व स्पष्टता उनके लेखन में है वही उनके जीवन व्यवहार में भी है। उनका मानना है कि लेखक हिंदू या मुसलमान नहीं होता है उसका एक धर्म होता है, वह है- मानवता।

अब्दुल बिस्मिल्लाह के अब तक **जहरबाद, समर शेष है, झीनी-झीनी बीनी चदरिया, दंतकथा, मुखड़ा क्या देखे, अपवित्र आख्यान, रावी लिखता है** उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इनके कथा लेखन पर जब भी बात होती है, आलोचक 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' पर ही स्थिर हो जाते हैं। इसी वजह से अब्दुल बिस्मिल्लाह का ज्यादातर लेखन अलक्षित ही रह गया। इनका अपवित्र आख्यान उपन्यास भी ऐसा ही उपन्यास हे जिस पर चर्चा न के बराबर हुई है। **अपवित्र आख्यान** उपन्यास हिंदू-मुस्लिम रिश्तों की कटुता व मधुरता के साथ उनके अंतर्विरोधों को सूक्ष्मता से चित्रित करता है।

प्रस्तुत विषय को शोध के लिए चुनने के पीछे के कारणों की तलाश के लिए मुझे अपने अतीत में जाना पड़ेगा। बचपन से ही मुझे 'मैं हिंदू हूं', 'वह मुसलमान है' जैसी चीजें परेशान करती रही हैं। आम लोगों द्वारा मुसलमानों के बारे में जो बताया गया वही धारणाएं बनती चली गईं- कि मुसलमान विदेशी हैं, इनकी भाषा उर्दू है, इनमें जाति-पाति का भेद नहीं है इत्यादि। हिंदी मीडिया व अखबार भी मुसलमानों की एक ही तरह की छवि को अधिक प्रसारित करते रहे हैं। एम.ए. के दौरान जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में, जहां पर एम.ए. प्रथम सत्र में हिंदी के छात्रों को उर्दू व उर्दू के छात्रों को हिंदी पढ़ना अनिवार्य है, भाषायी व अन्य सांप्रदायिक समस्याओं को गहराई से समझने का अवसर मिला। इसके साथ ही हिंदू-मुस्लिम दोनों समुदायों के भीतर व्याप्त कटुता व अविश्वास के कारणों को गहराई से समझने की जिज्ञासा भी जगी।

अपवित्र आख्यान पर अभी तक स्वतंत्र रूप से काम नहीं हुआ है। इस उपन्यास के माध्यम से मैंने हिंदू-मुस्लिम संबंधों के उतार-चढ़ाव व अंतर्विरोधों के साथ भारतीय समाज व शिक्षा जगत में मुसलमानों के साथ होने वाले भेदभावों को भी ढूंढ़ने का प्रयास किया गया है।

सुविधा की दृष्टि से लघु शोध-प्रबंध को चार अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय **समकालीन हिंदी उपन्यास और अपवित्र आख्यान** नामक शीर्षक से है। यह अध्याय दो उप-अध्यायों- **उपन्यास की समकालीनता, समकालीन हिंदी उपन्यास की परंपरा में अपवित्र आख्यान** नामक अध्यायों में विभक्त है।

प्रथम उप-अध्याय में समकालीनता को समझाने का प्रयास किया गया है साथ ही समकालीन प्रवृत्तियों की पहचान भी की गयी है। समकालीनता समय सापेक्ष होती है। विभिन्न आलोचकों के तर्कों के आधार पर समकालीनता का सीमांकन भी किया गया गया है। द्वितीय उप-अध्याय में समकालीन प्रवृत्तियों को हिंदी उपन्यासों में लक्षित करते हुए 'अपवित्र आख्यान' उपन्यास के समकालीन होने की पहचान की गयी है।

द्वितीय अध्याय **अपवित्र आख्यान में निहित अंतर्द्वंद्व** को दो उप-अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम उप-अध्याय **सामाजिक अंतर्द्वंद्व** में हिंदू व मुस्लिम समुदायों के भीतर एक-दूसरे के प्रति नफरत व अविश्वास का वातावरण बनने के पीछे जो मानसिकता रही है उसको ऐतिहासिक संदर्भों में समझने की कोशिश की गयी है। दोनों समुदायों में एक दूसरे के प्रति अविश्वास का कारण 'संवादहीनता' या एक-दूसरे को न समझना है। द्वितीय उप-अध्याय **भाषायी अंतर्द्वंद्व** में हिंदी व उर्दू के विवाद को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने की कोशिश की गयी है। भाषा को धर्म के साथ जोड़कर की जाने वाली राजनीति की भी पड़ताल की गयी है। जबकि भाषा किसी धर्म की नहीं बल्कि उसकी होती है जो उसका व्यवहार करे।

तृतीय अध्याय **अपवित्र आख्यान: शैक्षणिक जीवन की विडंबना** नामक शीर्षक से है। दो उप-अध्यायों में विभक्त इस आध्याय में प्रथम उप-अध्याय **शिक्षा जगत की विसंगतियां** के अंतर्गत शिक्षा जगत में व्याप्त भ्रष्टाचार जिसमें नियुक्ति प्रक्रिया, चयन के मापदंड एवं शिक्षण संस्थाओं की अंदरूनी राजनीति की पहचान करने की कोशश की गयी है। द्वितीय उप-अध्याय **लैंगिक भेदभाव** में समाज एवं शिक्षा जगत में लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेदभावों की पहचान करने की कोशिश की गयी है।

चतुर्थ अध्याय का शीर्षक **अपवित्र आख्यान उपन्यास का कथ्य और शिल्प** है। प्रथम उप-अध्याय में **अपवित्र आख्यान** उपन्यास के **कथ्य** की मूल संवेदना पर विस्तार से विचार किया गया है। द्वितीय उप-अध्याय में **शिल्प** पर चर्चा की गयी है। भाषा, संवाद शैली और बिंबों के माध्यम से उपन्यास में यथार्थ को सघनता के साथ प्रस्तुत किया गया है। कहीं-कहीं पूर्वदीप्ति शैली के उचित संयोजन व स्थानीय भाषा का प्रयोग कर

कथा को और भी प्रभावशाली बनाया गया है। प त्रात्मक शैली के माध्यम से उपन्यासकार ने शिल्प का अनूठा प्रयोग किया है।

उपसंहार के रूप में चारों अध्यायों का सार दिया गया है तथा प्रस्तुत सार में उपर्युक्त चारों अध्यायों के महत्वपूर्ण बिंदुओं का समाहार करने की कोशिश की गयी है।

इस समस्त शोध कार्य में मेरे शोध निर्देशक डॉ. रूपेश कुमार सिंह ने अपूर्व सहयोग प्रदान किया। शोध निर्देशक डॉ. रूपेश कुमार सिंह का धन्यवाद ज्ञापन मात्र औपचारिकता भर होगी। आभार के लिए तो शब्दकोश में बहुत सारे शब्द हैं पर मेरे भाव उन शब्दों के अर्थ से कहीं गहरे हैं। विषय चयन से लेकर, अध्यायों का विभाजन तथा शोध की दिशा तय करने में उनका महत्वपूर्ण सहयोग रहा। एक शिक्षक, अभिभावक व मित्र के रूप में उनके मूल्यवान सुझाव शोध में तो सहायक रहे ही, जीवन पथ पर भी हमेशा पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे। शोध कार्य के दौरान अब्दुल बिस्मिल्लाह जी से उपन्यास व उसकी रचना-प्रक्रिया के संबंध में बात करके कई समस्याओं को समझने में सहायता मिली।

इस अवसर पर अपने परिवारजनों को मैं नहीं भूल सकता। मां का प्यार व पिता का अनुशासन, भाई-बहन व परिजनों का स्नेह मिलता रहा जिसमें मुझे अप्रत्याशित बल दिया। मेरे मित्रों का कहना है कि दोस्ती में 'नो सॉरी, नो थैंक्स'। अतः उनकी भावनाओं की कद्र करना मेरा नैतिक कर्तव्य है। फिर भी औपचारिकता पूरी करने के लिए प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सहयोगी रहे जे.एन.यू. व डी.यू. के सभी मित्र जिन्होंने वहां के पुस्तकालयों से शोध से संबंधित आवश्यक सामग्री उपलब्ध करायी, हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के सभी वरिष्ठ (सीनियर्स), कनिष्ठ (जूनियर्स) एवं घनिष्ठ (क्लोज) मित्रों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। एक-एक का नाम लेना संभव नहीं है शायद इसीलिए अहमद फराज़ साहब ने सही कहा है-

तोड़ दिया तस्बीह (जपमाला) को इस ख्याल से,
क्या गिन-गिन के नाम लूं उसका, जो बेहिसाब देता है।

नवीन सिंह

म.गां.अं.हि.वि.वर्धा, महाराष्ट्र-442001